

तृतीयः स्कन्धः

अथ नवमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

ब्रह्मोवाच—ज्ञातोऽसि मेऽद्य सुचिरान्ननु देहभाजां, न ज्ञायते भगवतो गतिरित्यवद्यम् ।

नान्यत्त्वदस्ति भगवन्नपि तन्न शुद्धं, मायागुणव्यतिकराद्यदुर्बिभासि ॥१॥

पदच्छेद—ज्ञातः असि मे अद्य सुचिरात् ननु देहभाजाम्, न ज्ञायते भगवतः गतिः इति अवद्यम् ।

न अन्यत् त्वत् अस्ति भगवन् अपि तद् न शुद्धम्, माया गुण व्यतिकरात् यद् उरुः बिभासि ॥

शब्दार्थ—

ज्ञातः असि	४. ज्ञात हुए हैं	अन्यत्, त्वत्	६. भिन्न कोई वस्तु, आपसे
मे	३. मुझे	अस्ति	११. है
अद्य सुचिरात्	२. आज बहुत समय के बाद	भगवन्	१. हे भगवान् ! (आप)
ननु	१७. ही	अपि, तद्	१२. तथा जो है, वह
देह भाजाम्,	६. शरीर धारियों को	न, शुद्धम्,	१३. नहीं, है सत्य
न ज्ञायते	८. नहीं ज्ञान होता है	माया गुण	१५. माया के सत्त्वादि गुणों के
भगवतः गतिः	७. आपके स्वरूप का	व्यतिकरात्	१६. सम्बन्ध से (आप)
इति अवद्यम्।	५. यह दुर्भाग्य है (कि)	यद्	१४. क्योंकि
न	१०. सत् नहीं	उरुः बिभासि ॥१८.	उनमें दिखाई देते हैं

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आप आज बहुत समय के बाद मुझे ज्ञात हुए हैं । यह दुर्भाग्य है कि शरीर धारियों को आपके स्वरूप का ज्ञान नहीं होता । आपके अतिरिक्त कोई वस्तु सत् नहीं तथा जो है वह सत्य नहीं है, क्योंकि माया के सत्त्वादि गुणों के सम्बन्ध से आप ही उन वस्त्रुओं में दिखाई देते हैं ।

द्वितीयः श्लोकः

रूपं यदेतदवबोधरसोदयेन, शश्वन्निवृत्ततमसः सदनुग्रहाय ।

आदौ गृहीतमवतारशतैकबीजं, यन्नाभिपद्मभवनादहमाविरासम् ॥२॥

पदच्छेद—रूपम् यद् एतद् अवबोध रस उदयेन, शश्वत् निवृत्त तमसः सद् अनुग्रहाय ।

आदौ गृहीतम् अवतार शत एक बीजम्, यत् नाभि पद्म भवनात् अहम् आविरासम् ॥

शब्दार्थ—

रूपम्	२. स्वरूप है (वह)	आदौ गृहीतम्	६. प्रारम्भ में धारण किया है
यद् एतद्	१. (आपका) जो यह	अवतार	११. अवतारों का
अवबोध रस	३. ज्ञान शक्ति के	शत	१०. (यह स्वरूप) सैकड़ों
उदयेन	४. प्रकाशित रहने के कारण	एक बीजम्	१२. प्रधान कारण (है)
शश्वत्	५. सदा	यद् नाभिपद्म	१३. जिसके नाभिकमल के
निवृत्त	७. दूर रहता है	भवनात्	१४. मध्य से
तमसः	६. अज्ञान से	अहम्	१५. मैं
सद् अनुग्रहाय ।	८. सन्तों पर कृपा करने के लिए	आविरासम् ॥१६.	प्रकट हुआ हूँ

श्लोकार्थ—आपका जो यह स्वरूप है, वह ज्ञान शक्ति के प्रकाशित रहने के कारण सदा अज्ञान से दूर रहता है । आपने सन्तों पर कृपा करने के लिए सृष्टि के प्रारम्भ में इसे धारण किया है । यह स्वरूप सैकड़ों अवतारों का प्रधान कारण है, जिसके नाभि कमल के मध्य से मैं प्रकट हुआ हूँ ।

तृतीयः श्लोकः

नातः परं परम् यद्भवतः स्वरूप—मानन्दमात्रमविकल्पमविद्धवर्चः ।

पश्यामि विश्वसृजमेकमविश्वमात्मन्, भूतेन्द्रियात्मकमदस्त उपाश्रितोऽस्मि ॥३॥

पदच्छेद—न अतः परम् परम् यद्भवतः स्वरूपम्, आनन्द मात्रम् अविकल्पम् अविद्ध वर्चः ।

पश्यामि विश्वसृजम् एकम् अविश्वम् आत्मन्, भूत इन्द्रिय आत्मकम् अदः ते उपाश्रितः अस्मि ॥
शब्दार्थ—

न	८. नहीं (मानता हूँ)	विश्वसृजम्	१०. विश्वकी रचना करने वाले
अतः, परम्	७. इससे, भिन्न	एकम्	१४. अद्वितीय रूप को
परम्	१. हे परमात्मन् !	अविश्वम्	१३. (इस) अलौकिक (और)
यद्, भवतः	२. जो, आपका	आत्मन्	६. हे भगवन् !
स्वरूपम्,	६. स्वरूप है (उसे मैं)	भूत	११. पञ्च महाभूतों एवं
आनन्द, मात्रम्	३. आनन्द, घन	इन्द्रिय आत्मकम्	१२. इन्द्रियों के आश्रय
अविकल्पम्	४. भेद रहित (तथा)	अदः	१७. इस रूप की
अविद्ध, वर्चः ।	५. अखण्ड, तेजोमय	ते	१६. आपके
पश्यामि	१५. देख रहा हूँ (अतः मैं)	उपाश्रितः, अस्मि ॥	१८. शरण में, हूँ

श्लोकार्थ—हे परमात्मन् ! जो आपका आनन्द-घन, भेद-रहित तथा अखण्ड तेजोमय स्वरूप है, उसे मैं इससे भिन्न नहीं मानता हूँ । हे भगवन् ! विश्वकी रचना करने वाले पञ्च महाभूतों एवं इन्द्रियों के आश्रय इस अलौकिक और अद्वितीय रूपको देख रहा हूँ । अतः मैं आपके इस रूप की शरण में हूँ ।

चतुर्थः श्लोकः

तद्वा इदं भुवनमङ्गल मङ्गलाय, ध्याने स्म नो दर्शितं त उपासकानाम् ।

तस्मै नमो भगवतेऽनुविधेम तुभ्यं, योऽनादृतो नरकभागिभरसत्प्रसङ्गैः ॥४॥

पदच्छेद—तद् वा इदम् भुवन मङ्गल मङ्गलाय, ध्याने स्म नः दर्शितम् ते उपासकानाम् ।

तस्मै नमः भगवते अनुविधेम तुभ्यम्, यः अनादृतः नरक भागिभिः असत् प्रसङ्गैः ॥

शब्दार्थ—

तद् वा, इदम्	८. वह रूप, अब	तस्मै	१५. उस
भुवन मङ्गल	१. लोक कल्याणकारिन् !	नमः	१७. प्रणाम
मङ्गलाय	५. कल्याण के लिए	भगवते	१६. स्वरूप को
ध्याने	७. समाधि में	अनुविधेम	१८. निवेदन करते हैं
स्म	६. ही	तुभ्यम्	१४. (हम) आपके
नः	३. हम	यः	१२. जिस रूप का
दर्शितम्	६. दिखलाया (है)	अनादृतः	१३. अनादर करते हैं
ते	२. आपने	नरकः भागिभिः	११. पाप के, भागी (जीव)
उपासकानाम् ।	४. भक्तों के	असत् प्रसङ्गैः ॥	१०. विषयों में आसक्त (अतः)

श्लोकार्थ—लोक कल्याणकारी हे भगवन् ! आपने हम भक्तों के कल्याण के लिए ही समाधि में अब वह रूप दिखलाया है । विषयों में आसक्त, अतः पाप के भागी जीव जिस रूप का अनादर करते हैं हम आपके उस स्वरूप को प्रणाम निवेदन करते हैं ।

पञ्चमः श्लोकः

ये तु त्वदीयचरणाम्बुजकोशगन्धं, जिघ्रन्ति कर्णविवरैः श्रुतिवातनीतम् ।

भक्त्या गृहीतचरणः परया च तेषां, नापैषि नाथ हृदयाम्बुरुहात्स्वपुंसाम् ॥५॥

पदच्छेद—ये तु त्वदीय चरण अम्बुज कोश गन्धम्, जिघ्रन्ति कर्ण विवरैः श्रुति वात नीतम् ।

भक्त्या गृहीत चरणः परया च तेषाम्, न अपैषि नाथ हृदय अम्बुरुहात् स्व पुंसाम् ॥

शब्दार्थ—

ये तु	१. जो लोग	गृहीत	१३. बाँध रखे हैं
त्वदीय, चरण	४. आपके, चरण	चरणः	१२. (आपके) चरणों को
अम्बुज, कोश	५. कमल, कोश की	परया	१०. परा
गन्धम्,	६. सुगन्ध रूप कथा को	च	६. और
जिघ्रन्ति	८. ग्रहण करते हैं	तेषाम्,	१५. उन
कर्ण, विवरैः	७. कानों के, छिद्रों से	न, अपैषि	१८. नहीं, दूर होते हैं
श्रुति, वात	२. वेद रूप, वायु के द्वारा	नाथ	१४. हे स्वामिन् ! आप
नीतम् ।	३. लाई गयी	हृदय, अम्बुरुहात्	१७. हृदय कमल से
भक्त्या	११. भक्ति के बन्धन से	स्व, पुंसाम् ॥	१६. अपने, भक्त जनों के

श्लोकार्थ—जो लोग वेद रूप वायु के द्वारा लाई गयी आपके चरण-कमल कोश की सुगन्ध रूप क को कानों के छिद्रों से ग्रहण करते हैं और परा-भक्ति के बन्धन से आपके चरणों को ब रखे हैं; हे स्वामिन् ! आप अपने उन भक्त जनों के हृदय कमल से दूर नहीं होते हैं ।

षष्ठः श्लोकः

तावद्भयं द्रविणगेहसृहनिमित्तं, शोकः स्पृहा परिभवो विपुलश्च लोभः ।

तावन्ममेत्यसद्वग्रह आर्तिमूलं, यावन्न तेऽङ्घ्रिमभयं प्रवृणीत लोकः ॥६॥

पदच्छेद—तावत् भयम् द्रविण गेह सृहद् निमित्तम्, शोकः स्पृहा परिभवः विपुलः च लोभः

तावत् मम इति असत् अवग्रहः आर्तिमूलम्, यावत् न ते अङ्घ्रिम् अभयम् प्रवृणीत लोकः

शब्दार्थ—

तावत्	८. तभी तक (उसे)	मम, इति	१६. मैं मेरा, इस प्रकार का
भयम्	११. डर	असत् अवग्रहः	२०. दुष्ट, विचार (रहता है)
द्रविण, गेह	६. धन, घर और	आर्ति, मूलम्,	१८. दुःख का, कारण
सृहद्, निमित्तम्	१०. बान्धवों के, कारण होने वाला	यावत्	१. जब तक
शोकः, स्पृहा	१२. शोक, लालसा	न	६. नहीं
परिभवः	१३. अनादर	ते,	४. आपके
विपुलः	१५. बहुत बड़ी	अङ्घ्रिम्	५. चरणों की
च	१४. और	अभयम्	३. अभय देने वाले
लोभः ।	१६. लालच (बनी रहती है)	प्रवृणीत	७. शरण लेता है
तावत्	१७ (तथा) तभी तक	लोकः ॥	२. मनुष्य

श्लोकार्थ—जब तक मनुष्य अभय देने वाले आपके चरणों की शरण नहीं लेता है, तभी तक उसे धन, और बान्धवों के कारण होने वाला डर, शोक, लालसा, अनादर और बहुत बड़ी लालच रहती है तथा तभी तक दुःख का कारण मैं-मेरा इस प्रकार का दुष्ट विचार बना रहता

सप्तमः श्लोकः

दैवेन ते हतधियो भवतः प्रसङ्गात्, सर्वाशुभोपशमनाद्विमुखेन्द्रिया ये ।

कुर्वन्ति कामसुखलेशलवाय दीना, लोभाभिभूतमनसोऽकुशलानि शश्वत् ॥७॥

पदच्छेद—दैवेन ते हत धियः भवतः प्रसङ्गात्, सर्व अशुभ उपशमनात् विमुख इन्द्रियाः ये ।

कुर्वन्ति काम सुख लेश लवाय दीनाः, लोभ अभिभूत मनसः अकुशलानि शश्वत् ॥

शब्दार्थ—

दैवेन, ते	८. भाग्य ने उनकी	ये ।	१. जिन लोगों का
हत	१०. मार दी है	कुर्वन्ति	१८. करते रहते हैं
धियः	६. मति	काम, सुख	१५. काम, सुख के लिए
भवतः	५. आपकी	लेश लवाय	१४. तनिक मात्र
प्रसङ्गात्,	६. भक्ति से	दीनाः,	११. बेचारे (वे लोग)
सर्व, अशुभ	३. सब प्रकार के, अमंगलों को	लोभ, अधिभूत	१३. लोभ से ग्रस्त होकर
उपशमनात्	४. शान्त करने वाली	मनसः	१२. मन में
विमुख	७. दूर रहता है	अकुशलानि	१७. पापों को
इन्द्रियाः	२. अन्तःकरण	शश्वत् ॥	१६. सदा

श्लोकार्थ—जिन लोगों का अन्तःकरण सब प्रकार के अमंगलों को शान्त करने वाली आपकी भक्ति रहता है, भाग्य ने उनकी मति मार दी है । बेचारे वे लोग मन में लोभ से ग्रस्त होकर मात्र काम सुख के लिए सदा पापों को करते रहते हैं ।

अष्टमः श्लोकः

क्षुत्तृद्विधातुभिरिमा मुहुरर्द्यमानाः, शीतोष्णवातवर्षैरितरेतराच्च ।

कामाग्निनाच्युतरुषा च सुदुर्भरेण, सम्पश्यतो मन उरुक्रम सीदते मे ॥८॥

पदच्छेद—क्षुत् तृट् द्विधातुभिः इमाः मुहुः अर्द्यमानाः, शीत उष्ण वात वर्षैः इतरेतरात् च ।

काम अग्निना अच्युत रुषा च सुदुर्भरेण, सम्पश्यतः मनः उरुक्रम सीदते मे ।

शब्दार्थ—

क्षुत्, तृट्	४. भूख, प्यास	अच्युत	१. हे भगवन् !
द्विधातुभिः	५. वात, पित्त और कफ से	रुषा	१३. क्रोध से
इमाः	३. इस प्रजा को	च	११. और
मुहुः, अर्द्यमानाः	१४. बार-बार, पीड़ित होते हुए	सुदुर्भरेण	१२. असहनीय
शीत, उष्ण	६. सर्दी, गर्मी	सम्पश्यतः	१५. देखकर
वात, वर्षैः	७. हवा और वर्षा से	मनः	१७. मन
इतरेतरात्	८. परस्पर एक दूसरे से	उरुक्रम	२. हे त्रिविक्रम !
च ।	६. तथा	सीदते	१८. बड़ा खिन्न होता है
काम अग्निना	१०. कामनाओं की आग से	मे ॥	१६. मेरा

श्लोकार्थ—हे भगवन् त्रिविक्रम ! इस प्रजा को भूख, प्यास, वात, पित्त और कफ से; सर्दी, गर्मी और वर्षा से; परस्पर एक दूसरे से तथा कामनाओं की आग से और असहनीय क्रोध बार पीड़ित होते हुए देखकर मेरा मन बड़ा खिन्न होता है ।

तावन्न ससृतिरसौ प्रतिसक्रमेत, व्यर्थापि दुःखनिवहं वहती क्रियार्था ॥६॥

पदच्छेद—यावत् पृथक्त्वम् इदम् आत्मन इन्द्रिय अथ माया बलम् भगवत् जन ईश पश्येत ।

तावत् न ससृति असौ प्रति सक्रमेत व्यर्था अपि दुःख निवहम् वहती क्रिया अर्था ॥

शब्दार्थ—

यावत्	३. जब तक	तावत्	११. तब तक (उसके)
पृथक्त्वम्	६. भेद को	न	१३. नहीं
इदम्	८. इस	संसृतिः	१२. जन्म-मरण का चक्र
आत्मनः	७. अपने	असौ	१६. यह (संसार)
इन्द्रिय, अर्थ,	४. इन्द्रिय और विषयों के	प्रतिसंक्रमेत,	१४. समाप्त होता
माया, बलम्	५. जाल में, फँसकर	व्यर्था	१७. मिथ्या है (फिर भी)
भगवत्	६. भगवान् से	अपि	१५. यद्यपि
जनः	२. मनुष्य	दुःख, निवहम्	१६. दुःखों के समूह को
ईश	१. हे स्वामिन् !	वहती	२०. उत्पन्न करता रहता है
पश्येत् ।	१०. स्थापित किये रहता है	क्रिया, अर्था ॥	१८. कर्म के फल भोग के लिए

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! मनुष्य जब तक इन्द्रिय और विषयों के जाल में फँसकर भगवान् से अ इस भेद को स्थापित किये रहता है, तब तक उसके जन्म-मरण का चक्र समाप्त नहीं होता यद्यपि यह संसार मिथ्या है, फिर भी कर्म फल के भोग के लिए यह दुःखों के समूह को उत्प करता रहता है ।

दशमः श्लोकः

अह्निचापृतार्तकरणा निशि निःशयाना, नानामनोरथधिया क्षणभग्ननिद्राः ।

देवाहृतार्थरचना ऋषयोऽपि देव, युष्मत्प्रसङ्गविमुखा इह संसरन्ति ॥१०॥

पदच्छेद—अह्नि आपृत आर्त करणाः निशि निःशयाना, नाना मनोरथ धिया क्षण भग्न निद्राः ।

देव आहत अर्थ रचनाः ऋषयः अपि देव, युष्मत् प्रसङ्ग विमुखाः इह संसरन्ति ॥

शब्दार्थ—

अह्नि	७. (वे लोग) दिन के	देव	१६. भाग्य से
आपृत	८. कामों से	आहत	१८. असफल हो जाते हैं
आर्त, करणाः	६. अशान्त, चित्त (और)	अर्थ, रचनाः	१७. अर्थ सिद्धि के सारे उपाय
निशि	१०. रात में	ऋषयः, अपि	२. ऋषि लोग, भी
निःशयानाः,	११. अचेत सोये रहते हैं	देव	१. हे भगवन् !
नाना, मनोरथ	१३. अनेक, कामनाओं से	युष्मत्, प्रसंग	३. आपके, कथा प्रसंग से
धिया	१२. (उस समय भी) मन में	विमुखाः	४. दूर रहने के कारण
क्षण, भग्न	१५. पल-पल में टूटती रहती है	इह	५. इस संसार में
निद्राः ।	१४. (उनकी) नींद	संसरन्ति ॥	६. भटकते रहते हैं

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! सामान्य जन क्या, ऋषि लोग भी आपके कथा प्रसंग से दूर रहने के कारण संसार में भटकते रहते हैं । वे लोग दिन के कामों से अशान्त-चित्त और रात में अ होकर सोये रहते हैं । उस समय भी मन में अनेक कामनाओं से उनकी नींद पल-पल टूटती रहती है और भाग्य से अर्थसिद्धि के सारे उपाय असफल हो जाते हैं ।

यद्यद्विधा त उरुगाय विभावयन्ति, तत्तद्वपु प्रणयसे सदनुग्रहाय ॥११॥
 पदच्छेद त्वम भाव योग परिभावित हृत सरोजे आस्से श्रुत ईक्षित पथ ननु नाथ पुसाम् ।
 यद् यद् धिया ते उरुगाय विभावयन्ति तद् तद् वपु प्रणयसे सत अनुग्रहाय ॥

शब्दार्थ—

त्वम्, भाव योग	४. आप, भक्ति योग से	यद् यद्	१२. जिस-जिस
परिभावित	५. निर्मल	धिया	१३. भावना से
हृत, सरोजे,	७. हृदय, कमल में	ते	३१. वे (भक्त जन)
आस्से	६. विराजमान रहते हैं	उरुगाय	१०. अनन्त कीर्ति हे भगवन् !
श्रुत	२. वेदादि शास्त्रों से	विभावयन्ति	१४. (आपका) ध्यान करते हैं
ईक्षित, पथः	३. ज्ञात, स्वरूप वाले	तद् तद्, वपुः	१७. उस-उस, रूप को
ननु	८. अवश्य	प्रणयसे	१८. धारण करते हैं
नाथ	१. हे स्वामिन् !	सत्	१५. सन्तों पर
पुसाम् ।	६. भक्तों के	अनुग्रहाय ॥	१६. कृपा करने के लिए (आप)

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! वेदादि शास्त्रों से ज्ञात स्वरूप वाले आप भक्ति योग से निर्मल भक्तों के हृदय-कमल में अवश्य विराजमान रहते हैं । अनन्तकीर्ति हे भगवन् ! वे भक्त जन जिस-जिस भावन से आपका ध्यान करते हैं, सन्तों पर कृपा करने के लिए आप उस-उस रूप को धारण करते हैं

द्वादशः श्लोकः

नातिप्रसीदति तथोपचितोपचारैः--राराधितः सुरगणैर्हृदि बद्धकामैः ।

यत्सर्वभूतदयया सदलभ्ययैको, नानाजनेष्ववहितः सुहृदन्तरात्मा ॥१२॥

पदच्छेद—न अति प्रसीदति तथा उपचित उपचारैः, आराधितः सुर गणैः हृदि बद्ध कामैः ।

यत् सर्व भूत दयया असत् अलभ्यया एकः, नाना जनेषु अवहितः सुहृद् अन्तरात्मा ॥

शब्दार्थ—

न	८. नहीं	यत्	१०. जितना
अति प्रसीदति	६. प्रसन्न होते हैं	सर्वभूत	१२. सभी प्राणियों पर
तथा	७. उतना	दयया	१३. दया करने से (प्रसन्न होते हैं)
उपचित	४. अर्पित विविध	असत्, अलभ्यया	११. दुर्जनों को, दुर्लभ
उपचारैः,	५. पूजा सामग्रियों से	एकः,	१५. एकमात्र
आराधितः	६. पूजित होने पर (भी आप)	नाना, जनेषु	१४. सभी जीवों के
सुर गणैः	३. देवताओं के द्वारा	अवहितः	१७. (उनमें) स्थित
हृदि	१. हृदय में	सुहृद्	१६. मित्र हैं (और)
बद्धकामैः ।	२. कामना लिए हुए	अन्तरात्मा ॥	१८. (उनकी) आत्मा (हैं)

श्लोकार्थ—हृदय में कामना लिए हुए देवताओं के द्वारा अर्पित विविध पूजा सामग्रियों से पूजित होने पर भी आप उतना प्रसन्न नहीं होते, जितना दुर्जनों को दुर्लभ सभी प्राणियों पर दया करने से प्रसन्न होते हैं । आप सभी जीवों के एकमात्र मित्र हैं और उनमें स्थित उनकी आत्मा हैं ।

त्रयोदशः श्लोकः

पुंसामतो विविधकर्मभिरध्वराद्यै—दोनेन चोग्रतपसा व्रतचर्यया च ।

आराधनं भगवतस्तव सत्क्रियार्थो, धर्मोऽपितः कर्हिचित् ध्रियते न यत्र ॥१॥

पदच्छेद— पुंसाम् अतः विविध कर्मभिः अध्वर आद्यैः, दानेन च उग्र तपसा व्रत चर्यया च ।

आराधनम् भगवतः तव सत् क्रिया अर्थः, धर्मः अपितः कर्हिचित् ह्रियते न यत्र ॥

शब्दार्थ—

पुसाम्	१६.	मनुष्यों के	भगवतः	१४.	भगवान् की
अतः	६.	इसलिए	तव	१३.	आप
विविध, कर्मभिः	८.	अनेक, अनुष्ठानों से	सत् क्रिया	१७.	उत्तम, कर्म का
अध्वर, आद्यैः,	७.	यज्ञ, यागादि	अर्थः,	१८.	फल (है)
दानेन, च	६.	दान, और	धर्मः	३.	धर्म का
उग्र, तपसा	१०.	कठोर, तप से	अपितः	२.	समर्पण किये हुए
व्रत, चर्यया	१२.	व्रतों को, करने से	कर्हिचित्	४.	कभी
च ।	११.	तथा	ह्रियते, न	५.	नाश नहीं होता है
आराधनम्	१५.	आराधना ही	यत्र ॥	१.	जिस परमात्मा को

श्लोकार्थ—जिस परमात्मा को समर्पण किये हुये धर्म का कभी नाश नहीं होता, इसलिए यज्ञ-य अनेक अनुष्ठानों से, दान और कठोर तप से तथा व्रतों को करने से आप भगवान् की आप ही मनुष्यों के उत्तम कर्म का फल है ।

चतुर्दशः श्लोकः

शश्वत्स्वरूपमहसैव निपीतभेद—मोहाय बोधधिषणाय नमः परस्मै ।

विश्वोद्भूवस्थितिलयेषु निमित्तलीला—रासाय ते नम इदं चक्रमेश्वराय ॥१४॥

पदच्छेद— शश्वत् स्वरूप महसा एव निपीत भेद, मोहाय बोध धिषणाय नमः परस्मै ।

विश्व उद्भूव स्थिति लयेषु निमित्त लीला, रासाय ते नमः इदम् चक्रम् ईश्वराय ॥

शब्दार्थ—

शश्वत्	३.	सदा	स्थिति, लयेषु	६.	पालन और संहार के
स्वरूप महसा एव	१.	अपने स्वरूप के प्रकाश से ही	निमित्त लीला,	१०.	प्रयोजन से लीला का
निपीत	४.	दूर कर देने वाले (तथा)	रासाय ते	११.	खेल करने वाले, आप
भेद मोहाय	२.	भेद बुद्धि और अज्ञान को	नमः	१४.	प्रणाम
बोध धिषणाय	५.	ज्ञान के आश्रय (आप)	इदम्	१३.	यह
नमः	७.	नमस्कार है	चक्रम्	१५.	निवेदन करते हैं
परस्मै ।	६.	परमात्मा को	ईश्वराय ॥	१२.	परमेश्वर को (हम)

विश्व उद्भूव ८. जगत् की उत्पत्ति

श्लोकार्थ—अपने स्वरूप के प्रकाश से ही भेद-बुद्धि और अज्ञान को सदा दूर कर देने वाले तथा ज्ञ आश्रय आप परमात्मा को नमस्कार है । जगत् की उत्पत्ति, पालन और संहार के प्रयो लीला का खेल करने वाले आप परमेश्वर को हम यह प्रणाम निवेदन करते हैं ।

ते नैकजन्मशमल सहसैव हित्वा, सयान्त्यपावृतमृत तमज प्रपद्ये ॥१५॥

पदच्छेद यस्य अवतार गुण कम विडम्बनानि, नामानि ये असु विगमे विवशा गुणन्ति ।
ते न एक जन्म शमलम सहसा एव हित्वा मयान्ति अपावृतम ऋतम तम अजम प्रपद्ये ॥

शब्दार्थ—

यस्य, अवतार	४. जिस भगवान् के, अवतार की	जन्म, शमलम् १०. जन्मों के, पाप से
गुण, कर्म	५. कीर्ति और, लीलाओं को	सहसा, एव ११. तत्काल, ही
विडम्बनानि,	६. बताने वाले	हित्वा, १२. मुक्त होकर
नामानि	७. नामों का	संयान्ति १५. प्राप्त करते हैं
ये, असु	१. जो लोग, प्राण	अपावृतम् १३. (माया के) आवरण से रहित
विगमे	२. छोड़ते समय	ऋतम् १४. सत्यलोक को
विवशाः	३. विवश होकर (भी)	तम् १६. (मैं) उस
गुणन्ति ।	८. उच्चारण करते हैं	अजम् १७. अजन्मा (भगवान् की)
ते, न एक	९. वे लोग, अनेकों	प्रपद्ये ॥ १८. शरण लेता हूँ

श्लोकार्थ—जो लोग प्राण छोड़ते समय विवश होकर भी जिस भगवान् के अवतार की कीर्ति और लीलाओं को बताने वाले नामों का उच्चारण करते हैं, वे लोग अनेकों जन्मों के पाप से तत्काल ही मुक्त होकर माया के आवरण से रहित सत्यलोक को प्राप्त करते हैं। मैं उस अजन्मा भगवान् की शरण लेता हूँ।

षोडशः श्लोकः

यो वा अहं च गिरिशश्च विभुः स्वयं च, स्थित्युद्भवप्रलयहेतव आत्ममूलम् ।

भित्त्वा त्रिपाद्वृध एक उरुप्ररोहः, तस्मै नमो भगवते भुवनद्रुमाय ॥१६॥

पदच्छेद—यः वा अहम् च गिरिशः च विभुः स्वयम् च, स्थिति उद्भव प्रलय हेतवः आत्म मूलम् ।

भित्त्वा त्रिपाद् वृधे एकः उरु प्ररोहः, तस्मै नमः भगवते भुवन द्रुमाय ॥

शब्दार्थ—

यः	३. जो	भित्त्वा	१४. बँट कर
वा	५. जो	त्रिपाद्	१३. तीन प्रधान शाखाओं में
अहम्, च	४. मैं हूँ, और	वृधे	१५. फैले हुए हैं
गिरिशः, च	६. महादेव हैं, तथा	एकः	१२. अकेले ही
विभुः	९. भगवान् विष्णु हैं (उनके)	उरु, प्ररोहः,	११. अनेक, शाखाओंवाले (आप)
स्वयम्	८. साक्षात्	तस्मै	१७. उस आप
च,	७. जो	नमः	१६. नमस्कार है
स्थिति, उद्भव	१. (संसार के) पालन, उत्पत्ति	भगवते	१८. भगवान् को
प्रलय, हेतवः	२. (और) संहार का, कारण	भुवन, द्रुमाय ॥	१६. विश्व, वृक्ष के रूप में
आत्म, मूलम् । १०.	आप ही, मूल कारण हैं		

श्लोकार्थ—संसार के पालन, उत्पत्ति और संहार का कारण जो मैं हूँ और जो महादेव हैं तथा जो साक्षात् भगवान् विष्णु हैं, उनके आप ही मूल कारण हैं। अनेक शाखाओं वाले आप अकेले ही तीन प्रधान शाखाओं में बँटकर फैले हुए हैं। विश्व वृक्ष के रूप में उस आप भगवान् को नमस्कार है

सप्तदशः श्लोकः

लोको विकर्मनिरतः कुशले प्रमत्तः, कर्मण्ययं त्वदुदिते भवदर्चने स्वे ।

यस्तावदस्य बलवानिह जीविताशां, सद्यश्छिनत्त्यनिमिषाय नमोऽस्तु तस्मै ॥१७॥

पदच्छेद— लोकः विकर्म निरतः कुशले प्रमत्तः, कर्मणि अयम् त्वद् उदिते भवत् अर्चने स्वे ।

यः तावत् अस्य बलवान् इह जीवित आशाम्, सद्यः छिनत्ति अनिमिषाय नमः अस्तु तस्मै ॥

शब्दार्थ—

लोकः	८. संसार	यः तावत्	१०. जो, किन्तु
विकर्म, निरतः	९. कुकर्म में, लगा हुआ है	अस्य	१२. इस संसारी जीव की
कुशले	४. कल्याणकारी	बलवान्	११. शक्तिमान् भगवान् काल
प्रमत्तः,	६. प्रमादी होकर	इह	१३. संसार में
कर्मणि	५. कर्म को करने में	जीवित, आशाम्	१४. जीने की, आशा को
अयम्	७. यह	सद्यः, छिनत्ति	१५. शीघ्रता से, काट रहा है
त्वद्, उदिते	१. आपके द्वारा, बताये गये	अनिमिषाय	१७. आप काल रूप को
भवत् अर्चने	२. आपकी, आराधना रूप	नमः, अस्तु	१८. नमस्कार, है
स्वे ।	३. अपने	तस्मै ॥	१६. उस

श्लोकार्थ—आपके द्वारा बताये गये आपकी आराधना रूप अपने कल्याणकारी कर्म को करने में प्रमादी होकर यह संसार कुकर्म में लगा हुआ है; किन्तु जो शक्तिमान् भगवान् काल इस संसारी जीव को संसार में जीने की आशा को शीघ्रता से काट रहा है, उस आप काल रूप परमात्मा को नमस्कार है

अष्टादशः श्लोकः

यस्माद्बिभेम्यहमपि द्विपरार्धधिष्यम्, अध्यासितः सकललोकनमस्कृतं यत् ।

तेपे तपोः बहुसवोऽवरुत्समानस्, तस्मै नमो भगवतेऽधिमखाय तुभ्यम् ॥१८॥

पदच्छेद— यस्मात् बिभेमि अहम् अपि द्विपरार्ध धिष्यम्, अध्यासितः सकल लोक नमस्कृतम् यत् ।

तेपे तपः बहु सवः अवरुत्समानः, तस्मै नमः भगवते अधिमखाय तुभ्यम् ॥

शब्दार्थ—

यस्मात्, बिभेमि	७. जिस काल से, डरता हूँ	तपः	१०. तपस्या का
अहम्, अपि	६. मैं, भी	बहु सवः	८. अनेकों वर्षों तक (मैंने)
द्विपरार्ध, धिष्यम्	२. दो परार्धवर्ष. स्थायी	अवरुत्समानः,	८. (उसे) रोकने की इच्छा से
अध्यासितः	५. स्वामी	तस्मै	१३. उस
सकल, लोक	३. सारे, विश्व से	नमः	१६. नमस्कार है
नमस्कृतम्	४. वन्दित है (उसका)	भगवते	१५. भगवान् को (मेरा)
यत् ।	१. जो सत्यलोक	अधिमखाय	१२. (मेरे) तप के साक्षी
तेपे	११. अनुष्ठान किया	तुभ्यम् ॥	१४. आप

श्लोकार्थ—जो सत्यलोक दो परार्ध वर्ष तक स्थायी और सारे विश्व से वन्दित है, उसका स्वामी मैं हूँ जिस काल से डरता हूँ, उसे रोकने की इच्छा से अनेकों वर्षों तक मैंने तपस्या का अनुष्ठान किया, मेरे तप के साक्षी उस आप भगवान् को मेरा नमस्कार है ।

एकोनविंशः श्लोकः

तिर्यङ्मनुष्यविबुधादिषु जीवयोनि—ऽवात्मेच्छयाऽऽत्मकृतसेतुपरीप्सया यः ।

रेमे निरस्तरतिरप्यवरुद्धदेहः, तस्मै नमो भगवते पुरुषोत्तमाय ॥१५॥

पदच्छेद—तिर्यक् मनुष्य विबुध आदिषु जीव योनिषु, आत्म इच्छया आत्म कृत सेतु परीप्सया यः ।

रेमे निरस्त रतिः अपि अवरुद्ध देहः, तस्मै नमः भगवते पुरुषोत्तमाय ॥

शब्दार्थ—

तिर्यक्, मनुष्य	५. पशु-पक्षी, मनुष्य	निरस्त रतिः	११. विषय सुख से रहित होकर
विबुध, आदिषु	६. देवता, इत्यादि अनेक	अपि	१०. और
जीव, योनिषु,	७. जीवों की, योनियों में	अवरुद्ध	८. धारण किया
आत्म, इच्छया	४. अपनी, इच्छा से	देहः,	८. अवतार
आत्म, कृत	२. अपने द्वारा, बनाई गयी	तस्मै	१३. उन
सेतु, परीप्सया	३. धर्म-मर्यादा की, रक्षा के लिए	नमः	१६. नमस्कार है
यः ।	१. जिन्होंने	भगवते	१५. भगवान् को
रेमे	१२ (उसमें) विहार किया	पुरुषोत्तमाय ॥ १४.	पुरुषोत्तम

श्लोकार्थ—जिन्होंने अपने द्वारा बनाई गयी धर्म-मर्यादा की रक्षा के लिए अपनी इच्छा से पशु-पक्षी, मनुष्य, देवता इत्यादि अनेक जीवों की योनियों में अवतार धारण किया और विषय-सुख से रहित होकर उसमें विहार किया: उन पुरुषोत्तम भगवान् को नमस्कार है ।

विंशः श्लोकः

योऽविद्ययानुपहतोऽपि दशार्धवृत्त्या, निद्रामुवाह जठरीकृतलोकयात्रः ।

अन्तर्जलेऽहिकशिपुस्पर्शानुकूलाम्, भीमोर्मिमालिनि जनस्य सुखं विवृण्वन् ॥२०॥

पदच्छेद—यः अविद्यया अनुपहतः अपि दशार्ध वृत्त्या, निद्राम् उवाह जठरी कृत लोक यात्रः ।

अन्तर् जले अहि कशिपु स्पर्श अनुकूलाम्, भीम ऊर्मि मालिनि जनस्य सुखम् विवृण्वन् ॥

शब्दार्थ—

यः	१. जिन्होंने	अन्तर् जले	१२. जल के अन्दर
अविद्यया	८. योगमाया से	अहि, कशिपु	१४. शेषनाग की, शय्या पर
अनुपहतः, अपि	६. दूर रहकर भी	स्पर्श अनुकूलाम्	१३. सुखदायी कोमल
दशार्ध, वृत्त्या,	७. पाँच, शक्तियों वाली	भीम, ऊर्मि	१०. भयंकर, तरंग
निद्राम्	१५. योग निद्रा का	मालिनि	११. मालाओं वाले समुद्र के
उवाह	१६. आश्रय लिया था	जनस्य	४. (उन) जीवों को
जठरी कृत	३. उदर में रखकर	सुखम्	५. सुख
लोक यात्रः ।	२. सभी जीवों को	विवृण्वन् ॥	६. पहुँचाते हुए

श्लोकार्थ—जिन्होंने सभी जीवों को उदर में रखकर उन जीवों को सुख पहुँचाते हुए एवं (अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश) पाँच शक्तियों वाली योगमाया से दूर रहकर भी भयंकर तरंग मालाओं वाले समुद्र के जल के अन्दर शेषनाग की सुखदायी कोमल शय्या पर योगनिद्रा का आश्रय लिया था ।

तस्मै नमस्त उदरस्थभवाय योग निद्रावसानविकसन्नलिनैक्षणाय ॥२१॥

पदच्छेद यद् नाभि पद्म भवनात् अहम् आसम् ईड्य लोक त्रय उपकरण यद् अनुग्रहेण ।

तस्मै नम ते उदरस्थ भवाय योग निद्रा वसान विकसत् नलिन ईक्षणाय ।

शब्दाथ—

यद्, नाभि	६	जिनके, नाभि	नमः	१८	नमस्कार है
पद्म, भवनात्	७.	कमल के, मध्य	ते	१७.	आपको
अहम्	५.	मैं	उदरस्थ	१०.	उदर में रखने वाले (त
आसम्	८	उत्पन्न हुआ	भवाय	६.	सभी जीवों को
ईड्य,	१.	हे पूजनीय भगवन् !	योग, निद्रा	११.	योग, माया का
लोक त्रय	३.	तीनों लोकों की	अवसान	१२.	अन्त हो जाने से
उपकरणः	४.	सृष्टि का कारण	विकसत्	१३.	विकसित
यद्, अनुग्रहेण ।	२.	जिनकी, कृपा से	नलिन	१४.	कमल
तस्मै	१६.	उन	ईक्षणाय ॥	१५.	नयन

श्लोकार्थ—हे पूजनीय भगवन् ! जिनकी कृपा से तीनों लोकों की सृष्टि का कारण मैं जिनके कमल के मध्य उत्पन्न हुआ; सभी जीवों को उदर में रखने वाले तथा योग-माय अन्त हो जाने से विकसित कमल नयन उन आपको नमस्कार है ।

द्वाविंशः श्लोकः

सोऽयं समस्तजगतां सुहृदेक आत्मा, सत्त्वेन यन्मृडयते भगवान् भगेन ।

तेनैव मे दृशमनुस्पृशताद्यथाहम्, स्नक्ष्यामि पूर्ववद्विदं प्रणतप्रियोऽसौ ॥२२॥

पदच्छेद—सः अयम् समस्त जगताम् सुहृद् एकः आत्मा, सत्त्वेन यद् मृडयते भगवान् भगेन ।

तेन एव मे दृशम् अनुस्पृशतात् यथा अहम्, स्नक्ष्यामि पूर्ववत् इदम् प्रणत प्रियः असौ ॥

शब्दार्थ—

सः अयम्	५.	वे ही, ये	भगेन ।	६.	ऐश्वर्य से
समस्त, जगताम्	१.	सम्पूर्ण, प्राणियों के	तेन एव	१३.	उसी ज्ञान और ऐश्वर्य से
सुहृद्	३.	मित्र (और)	मे, दृशम्	१४.	मेरी, बुद्धि को
एकः	२.	एकमात्र	अनुस्पृशतात्	१५.	युक्त करें
आत्मा,	४.	आत्मा	यथा, अहम्,	१६.	जिससे, मैं
सत्त्वेन	८.	ज्ञान (और)	स्नक्ष्यामि	१६.	रचना कर सकूँ
यद्	७.	जिस	पूर्ववत्,	१७.	पूर्वकल्प के समान
मृडयते	१०.	सुख पहुँचाते हैं	इदम्	१८.	इस विश्व की
भगवान्	६.	भगवान्	प्रणत, प्रियः	११.	शरणागत, वत्सल
			असौ ॥	१२.	वे भगवान्

श्लोकार्थ—सम्पूर्ण प्राणियों के एकमात्र मित्र और आत्मा वे ही ये भगवान् जिस ज्ञान और ऐश्वर्य से पहुँचाते हैं, शरणागत-वत्सल वे भगवान् उसी ज्ञान और ऐश्वर्य से मेरी बुद्धि को युक्त जिससे मैं पूर्वकल्प के समान इस विश्व की रचना कर सकूँ ।

तस्मिन् स्वविक्रममिदं सृजतोऽपि चेतो, युञ्जीत कर्मशमलं च यथा विजह्याम् ॥२॥

पदच्छेद—एष प्रपन्न वरद रमया आत्मशक्त्या यद् यद् करिष्यति गृहीत गुण अवतार ।

तस्मिन् स्व विक्रमम इदम सृजत अपि चेत युञ्जीत कर्म शमलम च तथा विजह्याम्
शब्दार्थ—

एषः	२. ये भगवान्	इदम्	६. यह
प्रपन्न, वरदः	१. भक्तों के, वरदायक	सृजतः	१३. सृष्टि करते समय
रमया	४. लक्ष्मी जी के साथ	अपि	११. भी
आत्म शक्त्या,	३. अपनी शक्ति	चेतः	१४. (मेरे) मन को
यद् यद्	७. जो-जो कर्म	युञ्जीत	१५. प्रेरित करें
करिष्यति	८. करेंगे	कर्म	१६. कर्म से
गृहीत	६. लेकर	शमलम्	१८. सृष्टि के बाधक
गुणअवतारः।	५. कलावतार	च	१७. कि (मैं)
तस्मिन्	१२. उन्हीं में से एक है	यथा	१६. जिससे
स्व विक्रमम्	१०. मेरा कर्म	विजह्याम् ॥ २०.	दूर रह सकूँ

श्लोकार्थ—भक्तों के वरदायक ये भगवान् अपनी शक्ति लक्ष्मी जी के साथ कलावतार लेकर जो-जो करेंगे; यह मेरा कर्म भी उन्हीं में से एक है। ये भगवान् सृष्टि करते समय मेरे मन प्रेरित करें; जिससे कि मैं सृष्टि के बाधक कर्म से दूर रह सकूँ।

चतुर्विंशः श्लोकः

नाभिह्रदादिह सतोऽम्भसि यस्य पुंसो, विज्ञानशक्तिरहमासमनन्तशक्तेः ।

रूपं विचित्रमिदमस्य विवृण्वतो मे, मारीरिषीष्ट निगमस्य गिरां विसर्गः ॥२४॥

पदच्छेद—नाभि ह्रदात् इह सतः अम्भसि यस्य पुंसः, विज्ञान शक्तिः अहम् आसम् अनन्त शक्तेः ।

रूपम् विचित्रम् इदम् अस्य विवृण्वतः मे, (मा रीरिषीष्ट निगमस्य गिराम् विसर्गः ॥

शब्दार्थ—

नाभि, ह्रदात्	६. नाभि, सरोवर से	रूपम्	१२. स्वरूप का
इह	१. इस (प्रलय कालीन)	विचित्रम्	११. अद्भुत
सतः	३. विद्यमान (एवम्)	इदम्	१०. इस
अम्भसि	२. जल में	अस्य	६. (वे भगवान्) संसार के
यस्य, पुंसः,	५. जिस, परम पुरुष के	विवृण्वतः, मे	१३. विस्तार करते समय, मे
विज्ञान शक्तिः	७. (उसकी) ज्ञान शक्ति के रूप में	मा रीरिषीष्ट	१६. नष्ट न होने दें
अहम्, आसम्	८. मैं, उत्पन्न हुआ हूँ	निगमस्य	१४. वेद की
अनन्त, शक्तेः ।	४. असीम, शक्ति सम्पन्न	गिराम् विसर्गः ॥ १५.	वाणी के उच्चारण को

श्लोकार्थ—इस प्रलय कालीन जल में विद्यमान एवं असीम शक्ति सम्पन्न जिस परम पुरुष के सरोवर से उसकी ज्ञान शक्ति के रूप में मैं उत्पन्न हुआ हूँ; वे भगवान् संसार के इस ३ स्वरूप का विस्तार करते समय मेरी वेद की वाणी के उच्चारण को नष्ट न होने दें।

उत्थाय विश्वविजयाय च नो विषाद, माध्व्या गिरापनयतात्पुरुष पुराण ।
 पदच्छेद स असौ अदभ्र करुण भगवान् विवृद्ध प्रेम स्मितेन नयन अम्बुरुहम् विजृम्भन ।
 उत्थाय विश्व विजयाय च न विषादम् माध्व्या गिरा अपनयतात् पुरुष पुराण ॥

शब्दार्थ—

सः	१. अव	विश्व विजयाय	१२. जगत् की सृष्टि के
असौ	५. वे	च	११. तथा
अदभ्र, करुणः	२. अपार, करुणामय	नः	१४. हमारे
भगवान्, विवृद्ध,	६. भगवान्, परम	विषादम्,	१५. अज्ञान को
प्रेम, स्मितेन	७. प्रेम भरी, मुस्कान के साथ	माध्व्या, गिरा	१३. (अपनी) मधुर, वा
नयन, अम्बुरुहम्	८. (अपने) नेत्र, कमल को	अपनयतात्	१६. दूर करें
विजृम्भन् ।	९. खोलते हुए	पुरुषः	४. पुरुष
उत्थाय	१०. उठें	पुराणः ॥	३. आदि

श्लोकार्थ—अब अपार करुणामय, आदि पुरुष वे भगवान् परम प्रेम भरी मुस्कान के साथ अ कमल को खोलते हुये उठें तथा जगत् की सृष्टि के लिए अपनी मधुर वाणी से हमारे को दूर करें ।

षड्विंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

स्वसम्भवं निशाम्यैवं तपोविद्यासमाधिभिः ।
 यावन्मनोवचः स्तुत्वा विरराम स खिन्नवत् ॥२६॥
 पदच्छेद— स्व सम्भवम् निशाम्य एवम्, तपः विद्या समाधिभिः ।
 यावत् मनः वचः स्तुत्वा, विरराम सः खिन्नवत् ॥

शब्दार्थ—

स्व	३. अपनी	यावत्	११. शक्ति भर
सम्भवम्	४. उत्पत्ति के आश्रय भगवान् का	मनः	६. मन और
निशाम्य	५. दर्शन करके (तथा)	वचः	१०. वाणी से (उनकी)
एवम्	१. इस प्रकार	स्तुत्वा	१२. स्तुति करके
तपः	६. तपस्या	विरराम	१४. विराम ले लिये
विद्या	७. ज्ञान और	सः	२. ब्रह्मा जी
समाधिभिः ।	८. समाधि के द्वारा	खिन्नवत् ॥	१३. उदासीन की भाँति

श्लोकार्थ—इस प्रकार ब्रह्मा जी अपनी उत्पत्ति के आश्रय भगवान् का दर्शन करके तथा तपस्या, : समाधि के द्वारा मन और वाणी से उनकी शक्ति भर स्तुति करके उदासीन की भाँति ले लिये ।